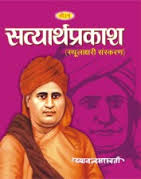
**ओ३म्**

**‘संसार में मनुष्यों के कर्तव्य संबंधी ज्ञान-विज्ञान का सर्वोत्तम ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

कबीर दास जी ने सत्य की महिमा को बताते हुए कहा है कि **‘सांच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप, जाके हृदय सांच है ताके हृदय आप’** वस्तुतः संसार में सत्य से बढ़कर कुछ नहीं है। ईश्वर, जीव व प्रकृति सत्य हैं अर्थात् इनका संसार में अस्तित्व है। बहुत से सम्प्रदायों व स्वयं को ज्ञानी मानने वाले लोग आज भी न तो ईश्वर के अस्तित्व को मानते हैं और न ही जीवात्मा को। ऐसी स्थिति में सत्य क्या है? इसे जानने की प्रत्येक मनुष्य को, चाहे वह किसी भी मत व सम्प्रदाय का क्यों न हो, स्वाभाविक इच्छा होती है। इच्छा रखने पर भी उसे उसके प्रश्नों के उत्तर नहीं मिलते तो विवश होकर वह परम्पराओं का दास बन जाता है। महर्षि दयानन्द के जीवन में भी समय आया जब उन्होंने ईश्वर, मूर्तिपूजा व मृत्यु विषयक कुछ प्रश्नों को जानने की जिज्ञासा की परन्तु उन्हें कहीं से इसका समाधान नहीं मिला। इस पर उन्होंने स्वयं ही सत्य की खोज करने का निश्चय किया और कालान्तर में घोर तप व पुरुषार्थ के बाद वह अपने मिशन में सफल रहे। उनके गुरू प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द की प्रेरणा हुई कि उन्होंने जीवन में जिन सत्यों की खोज की है, उससे संसार को लाभान्वित करें तो यही उनके जीवन का उद्देश्य बन गया। इसी का एक परिणाम उनके द्वारा संसार संबंधी सभी सत्य मान्यताओं को बताने वाले ग्रन्थ **‘सत्यार्थ प्रकाश’** का प्रणयन है। मानव जाति का यह परम सौभाग्य है कि आज महर्षि दयानन्द की कृपा से उसे वह सत्य ज्ञान प्राप्त है जिसके प्रति विगत लगभग पांच हजार वर्षो तक हमारे देश व विश्व के सभी लोग अनजान व भ्रमित थे। आईये, सत्यार्थ प्रकाश से जुड़े कुछ प्रश्नों को जानते हैं।

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ की रचना क्यों की? इसे उन्हीं के शब्दों में जानते हैं। वह सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में लिखते हैं कि **‘मेरा इस ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है, अर्थात् जो सत्य है उस को सत्य और जो मिथ्या है उस को मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय। किन्तु जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिए विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्याऽसत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयम् अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।’** महर्षि दयानन्द ने इन पंक्तियों में सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ लिखने का अपना आशय स्पष्ट व प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत किया है। यहां उन्होंने सत्य के प्रचार प्रसार में आने वाली कठिनाईयों व समस्याओं का भी संकेत किया है। उनके समय व आजकल की धार्मिक परिस्थितियों में कुछ विशेष अन्तर नहीं आया है। आज भी सभी मत-मतान्तर अपने अपने मतों की सत्याऽसत्य मान्यताओं पर किंचित विचार व मनन न करके उसकी एक-एक पंक्ति को सत्य मानकर अन्धश्रद्धा से ग्रसित ही दिखाई देते हैं जिससे सत्याऽसत्य का निर्णय न होने में बाधायें उपस्थित हैं। इस कारण से देश व विश्व के मनुष्यों को आध्यात्मिक सुख प्राप्त न होकर उनके लोक-परलोक बिगड़ रहे हैं जिसकी चिन्ता किसी को भी नहीं है। आज का युग विज्ञान का युग है। बहुत अधिक समय तक कोई किसी को सत्य से अपरिचित व दूर नहीं रख सकता। समय आयेगा जब लोग सत्य को प्राप्त करेंगे। इसमें समय लग सकता है। सत्य अविनाशी व अमर है और असत्य अस्थिर व अन्धकार की तरह से शीघ्र नष्ट होने वाला होता है। अतः मत-मतान्तरों का असत्य भविष्य में अवश्य ही दूर होगा, यह निश्चित है।

सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में महर्षि दयानन्द ने अनेक महत्वपूर्ण बातों का प्रकाश करते हैं। ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी होने के कारण इन पर एक दृष्टि डाल लेते हैं। वह लिखते हैं कि **‘मनुष्य का आत्मा सत्याऽसत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। परन्तु इस ग्रन्थ (सत्यार्थ प्रकाश) में ऐसी बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य है, किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्याऽसत्य को मनुष्य लोग जान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें, क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।’** इन पंक्तियों में महर्षि दयानन्द ने पहली महत्वपूर्ण बात यह लिखी है कि मनुष्य का आत्मा सत्याऽसत्य को जानने वाला होता है। दूसरी यह कि सत्य के अर्थ का प्रकाश करने के पीछे उनका उद्देश्य किसी का मन दुःखाना व हानि करना कदापि व किंचित मात्र नहीं है। और अन्त में **सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह कहते हैं कि मनुष्य जाति की उन्नति में सहायता के लिए वह सत्य व असत्य का प्रकाश कर रहें हैं क्योंकि सत्योपदेश ही एकमात्र मनुष्य जाति की उन्नति का कारण हैं।** अतः मनुष्य जाति की उन्नति के लिए ही सत्यार्थ प्रकाश का प्रणयन महर्षि दयानन्द ने किया था, यह उनके यहां दिए शब्दों व सत्यार्थ प्रकाश को आद्योपान्त पढ़कर सिद्ध होता है। इसकी साक्षी पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती आदि रहे हैं। यह भी निवेदन है कि आत्मा सत्य को जानते हुए भी अज्ञान रूपी पर्दें को प्रयत्न्पूर्वक न हटाने के कारण सत्य से वंचित रहता है।

इसके बाद महर्षि दयानन्द जगत का पूर्ण हित कैसे हो सकता है, उसकी बात करते हैं और उसका उपाय भी बताते हैं। उन्होंने मत-मतान्तरों से मनुष्यों को होने वाले सुख-दुःख की चर्चा भी की है। उनके द्वारा कहे गये यह शब्द भी अनमोल होने के कारण प्रस्तुत हैं। वह कहते हैं कि **‘यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़ सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सब के अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक दूसरे से विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्त्ते वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि (अन्य अन्य मतों के) विद्वानों के विरोध से अविद्वानों (सामान्य जनों) में विरोध बढ़ कर अनेकविध दुःख की वृद्धि और सुख की हानि होती है। इस हानि ने, जो कि स्वार्थी मनुष्यों को प्रिय है, सब मनुष्यों को दुःखसागर में डूबा दिया है।’** यहां महर्षि दयानन्द सभी मत वालों से पक्षपात छोड़कर **‘सर्वतन्त्र सिद्धान्त’** को अपनाने की अपील कर रहे हैं किन्तु खेद है कि आज तक किसी ने उनकी इन बातों पर ध्यान नहीं दिया।

सत्यार्थप्रकाश की भूमिका से ही महर्षि दयानन्द लिखित कुछ अन्य महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख करते हैं। वह कहते हैं कि **‘इनमें से जो कोई सार्वननिक हित लक्ष्य में धर प्रवृत्त होता है, उससे स्वार्थी लोग (मत-मतान्तर वाले) विरोध करने में तत्पर होकर अनेक प्रकार विघ्न करते हैं। परन्तु ‘सत्यमेव जयति नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।’ अर्थात् सर्वदा सत्य का विजय ओर असत्य का पराजय और सत्य ही से विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है। इस दृढ़ निश्चय के आलम्बन से आप्त लोग परोपकार करने से उदासीन होकर कभी सत्यार्थप्रकाश करने से नहीं हटते।** आगे वह कहते हैं कि यह बड़ा दृढ़ निश्चय है कि **‘यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।’** यह गीता का वचन है। इसका अभिप्राय यह है कि जो-जो विद्या और धर्मप्राप्ति के कर्म हैं, वे प्रथम करने में विष के तुल्य और पश्चात् अमृत के सदृश होते हैं। ऐसी बातों को चित्त में धरके मैंने इस ग्रन्थ को रचा है। श्रोता या पाठकगण भी प्रथम प्रेम से देख के इस ग्रन्थ का सत्य-सत्य तात्पर्य जान कर यथेष्ट करें।’ इन पंक्तियों में उन्होंने आप्त लोगों के देश-समाज हित व परोपकार की भावना से कर्तव्य कर्म करने और ग्रन्थ के प्रयोजन पर भी एक अन्य प्रकार से अपना मत प्रकट किया है और कहा है कि इसका परिणाम अमृत के सृदश होगा। वस्तुतः जिसने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ से लाभ उठाया है, उसके लिए इसका परिणाम निश्चय ही अमृत तुल्य हुआ है।

अपनी निष्पक्षता को बताते हुए महर्षि दयानन्द ने कहा है कि **‘यद्यपि मैं आर्यावर्त्त देश में उत्पन्न हुआ और वसता हूं, तथापि जैसे इस देश के मत-मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न कर याथातथ्य प्रकाश करता हूं, वैसे ही दूसरे देशस्थ वा मत वालों के साथ भी वर्त्तता हूं। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में वर्त्तता हूं, वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों को भी वर्त्तता योग्य है। क्योंकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति, मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बन्ध करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता, परन्तु ऐसी बातें मनुष्यपन से बाहर हैं। क्योंकि जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं, जब मनुष्य शरीर पाके वैसा ही कर्म करते हैं तो वे मनुष्य स्वभावयुक्त नहीं, किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहाता है और जो स्वार्थवश होकर परहानिमात्र करता रहता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।’**

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश को 14 समुल्लासों में लिखा है। प्रथम 10 समुल्लास पूर्वार्ध के हैं जिसमें वैदिक मान्यताओं का पोषण व मण्डन है। उत्तरार्ध के 4 समुल्लासों में क्रमशः आर्यवर्त्तीय मतमतान्तरों, बौद्ध व जैन मत, ईसाईमत और मुसलमानों के मत की सत्य व असत्य मान्यताओं का सत्याऽसत्य के निर्णयार्थ खण्डन-मण्डन किया गया है। हम यह अनुभव करते हैं कि यदि महर्षि दयानन्द के समय में मत-मतान्तरों में सत्य और असत्य मान्यतायें, विचार व सिद्धान्त न होते, **केवल सत्य ही सत्य होता,** तो उनको खण्डन व मण्डन करने की आवश्यकता न पड़ती। **उन्होंने ईश्वर की आज्ञा से असत्य के दमन व दलन तथा सत्य की प्रतिष्ठा के लिए एक महान कार्य किया है जिस ओर विगत 5 हजार वर्षों में किसी का ध्यान नहीं गया था और न ही उनकी योग्यता वाला मनुष्य विगत पांच हजार वर्षों में उत्पन्न ही हुआ जो इस कार्य को कर सकता। महर्षि दयानन्द की एक अनुपम देन यह है कि उन्होंने अपने समय सन् 1825-1883 में प्रचलित सभी भ्रान्तियों को मिटाकर ईश्वर, वेद, जीवात्मा, प्रकृति व मनुष्य जीवन के कर्तव्यों यथा ईश्वर उपासना, पंचमहायज्ञ आदि का विस्तार से परिचय कराया जिसको लोग भूल चुके थे और अविद्याग्रस्त होकर अन्धकार में विचर रहे थे।** महर्षि दयानन्द की सभी मान्यतायें एवं विचार वेद, तर्क और युक्तियों पर आधारित होने से विज्ञानसम्मत हैं। हम यह अनुमान करते हैं कि जिस प्रकार विज्ञान की पुस्तकें सारे संसार के लोगों द्वारा बिना पक्षपात के उत्सुकता से पढ़ी जाती है, उसी प्रकार से एक दिन **‘सत्यार्थप्रकाश’** को विश्व में मान्यता प्राप्त होगी। यह दिन हमारे जीवन में भले ही न आये, परन्तु आयेगा अवश्य क्योंकि **‘सत्यमेव जयते नानृतं’**। सत्य व असत्य के संघर्ष में सदा सर्वदा सत्य की ही विजय होती है। यह भी कहना समीचीन है कि महर्षि दयानन्द ने अपने समय में धर्म के क्षेत्र में विलुप्त सत्य विचारों व सिद्धान्तों को विश्व के सामने रखा था। वह चाहते थे कि लोग असत्य छोड़ कर सत्य का ग्रहण करें। उनके जीवन काल में उनका उद्देश्य पूरा न हो सका और आज भी नहीं हुआ है। भविष्य में यह अवश्य होगा और ईश्वर की भी इसमें विशेष भूमिका होगी। इसका कारण ईश्वर का सत्य में प्रतिष्ठित होना है। उसका कर्म फल सिद्धान्त भी सत्य और असत्य के आधार पर ही चलता है जिसमें सत्य पुरुस्कार के योग्य और असत्य दण्डनीय है। उसका यह सिद्धान्त सब मतों व सम्प्रदायों पर लागू है जिसका दिग्दर्शन हमें प्रतिदिन प्रतिक्षण होता है। यही सिद्धान्त सत्य मत की संवृद्धि का आधार है।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**